P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-1) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में समाजगत मूल्य चेतना

सीमा चौधरी
शोधार्थी,
कला संकाय, हिन्दी विभाग
इं.क.सं. विश्वविद्यालय
खैरागढ़, छ.ग., भारत

सारांश

मूर्धन्य उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा एक ऐसे जागरूक रचनाकार रहे,जो अपने सामाजिक दायित्व को पूरी ईमानदारी के साथ अपनी लेखनी के माध्यम से निभाया है। वे केवल इतिहास ही नहीं, देश, समाज, परम्परा, रीति–रिवाज, जीवन–मूल्य जैसे जीवन जगत के महत्वपूर्ण पक्षों को उजागर किया।

मुख्य शब्द : उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, हिन्दी साहित्य।

प्रस्तावना

संस्कृत आचार्य मम्मट ने छः काव्य प्रयोजनों में जनकल्याण को स्थान दिया है। उनका मानना है कि साहित्य सृजन की सार्थकता तभी सार्थक होगी, जब वह अपने से इतर जनों के हित से जुड़ा हो। यह तो निर्विवाद सत्य है कि साहित्य में जनहित करने की क्षमता सर्वाधिक होती है। इतिहास गवाह है कि साहित्य का काम केवल मनोरंजन करना, यथार्थ अंकन करना ही नहीं है, बल्कि वह जन–मन के मनोबल को बढ़ाकर उसे सही राह दिखाने का उत्कृष्ट कार्य भी करता है। तभी तो साहित्य सृजन को 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' कहा गया है। डॉ. प्रेमशंकर ने लेखन की सार्थकता को स्पष्ट करते हुए कहा है– ''सार्थक लेखन परिवेश को नया विन्यास देने का प्रयत्न करता है और 'शब्द ब्रह्म है' को चरितार्थ करना चाहता है। स्वीकृति और निषेध, ग्रहण और स्वीकार की द्वन्द्वात्मकता से सही रचना का निर्माण होता है। माना कि परिवेश से लेखक प्रभाावित होता है, प्रेरणा भी ग्रहण करता है, पर वह इसी बिन्दु पर ठहर नहीं जाता। सार्थक लेखन अपने समय को चुनौती भी देता है, उसे ललकारता है और रचना का इतिहास साक्षी है कि जब शब्द की सही ललकार दुर्बल होती है, तो समाज को कोई नई दिशा नहीं मिलती।''[1]

प्रेमचंदयुगीन वृन्दानलाल वर्मा एक ऐसे ही सजग रचनाकार हैं, जो अपने सामाजिक दायित्व को पूरी ईमानदारी, बेबाकी और साहस के साथ अपनी लेखनी के माध्यम से निभाया है। इनके उपन्यास विधा अपने समय व समाज की विसंगतियों का सच्चा दस्तावेज प्रस्तुत करता है।

मूर्धन्य उपन्यासकार वर्मा जी एक ऐसे जागरूक रचनाकार रहे, जो केवल इतिहास ही नहीं, देश, समाज, संस्कार, परम्परा, रीति–रिवाज, जीवन–मूल्य जैसे जीवन जगत के महत्त्वपूर्ण पक्षों को उजागर किया। उन्होंने निर्द्वन्द्व भाव से ऊँच–नीच, जाँत–पाँत, छुआछूत की प्रवृत्तियों का विरोध कर समाज में पारस्परिक सौहार्द्र जैसे सद्भाव को स्थापित करने का समर्थन किया है।

वर्मा जी के लोक–चिंतन का सबसे सशक्त पक्ष यही है कि उन्होंने निर्भीकता से उन सामाजिक रीति–रिवाजों का विरोध किया, जो अन्याय–अत्याचार करने वाले थे, जिनसे समाज के किसी भी व्यक्ति को पीड़ा पहुँचती थी। इनके उपन्यासों का प्रत्यक्ष संबंध समाज से रहा है। उन्होंने सामाजिक तत्त्वों का वर्णन यथार्थ के धरातल पर किया। शायद ही कोई ऐसा पहलू या मुद्दा है, जो इनसे अछूता रह गया हो।

समाज में मौजूद जातिगत विषमता एक ऐसा सच है, जो सदा से समाज के लिए कष्टदायक रहा है। जिससे मानवता आहत होती है। जातिगत भेद–भाव का विकसित रूप विवाह संबंधों में भी बाधा उत्पन्न करता है। इस कुप्रथा का विरोध वर्मा जी करते हैं तथा एक सुन्दर समाधान भी प्रस्तुत करते हैं– ''यदि एक जाति वाला दूसरी जाति से विवाह–संबंध करना चाहे, तो मजे में करे।''[2] वस्तुतः वर्मा जी संकीर्ण सोच का त्याग कर समाज में समानता लाने की अपील करते हैं। जब तक मानव जातिगत बंधन में जकड़ा रहेगा, तब तक समाज में खुशहाली कायम नहीं हो सकती है। अतः वर्मा जी अन्तरजातिय विवाह का समर्थन करते हैं।

जाति–पाँति की दकियानुस से समाज का सदा अहित ही होता है, फिर भी लोग इस कुप्रथा को लादे हुए हैं। वर्मा जी इस कुप्रथा का पर्दाफास करते हैं– ''अपनी निगाहों में नीचे गिरा हुआ हिंदू जब दुनियाँ की निगाहों में उठने की चिंता और कोशिश करता है, तब वह छुआछूत के आचार–विचार को बढ़ा देता है।''[3]

दहेज प्रथा समाज का एक घृर्णित सच है। यह वह अग्निकुण्ड है, जिसके कारण समाज में लिंगगत भेद को जन्म देता है। शायद इसी वजह से आज भी कुछ संकीर्ण सोच वाले अभिभावक कन्या के जन्म पर नाखुश दिखते हैं। दहेज प्रथा नारी जीवन के लिए घोर अभिशाप है। वर्मा जी दहेज प्रथा के कट्टर विरोधी थे। उनके द्वारा रचित 'लगन' उपन्यास में दहेज प्रथा के दुष्परिणाम को दिखाया गया है। उपन्यास की नायिका रामा इसी दहेज प्रथा से क्लांत और दुःखी है। दहेज न देने के कारण वर देवीसिंह को उसके पिता षिबू माते जबरदस्ती लेकर चला जाता है, और विवाहिता वधु अपने पिता के घर पर ही रह जाती है। इस कुरीति का विरोध वर्मा जी ने समाज के कुछ भले लोगों से करवाया है– ''लेनदेन की ऐसी प्रथा निकालना अच्छा नहीं है।''[4]

'अचल मेरा कोई' का पात्र सुधाकर दहेज जैसे कुप्रथा का घोर विरोधी है। उसका मानना है कि ''दान दहेज तो भिखारियों और कोढ़ी–अपाहिजों को दिया जाना चाहिए।''[5] अर्थात् वर्मा जी दहेज प्रथा के दुष्परिणाम को दिखाते हैं तथा समाज को पथ भ्रष्ट होने से बचाना चाहते हैं।

दहेज–प्रथा के समान पर्दा प्रथा भी समाज का एक घृर्णित रुप है। धर्म के ठेकेदार सदा से नारियों पर अत्याचार करने से बाज नहीं आते हैं। वर्मा जी नारी के प्रति हो रहे अत्याचारों से अत्यंत दुःखी थे। अतः उन्होंने पर्दाप्रथा उन्मूलन का आवाज बुलंद किये। 'विराटा की पद्मिनी' में पर्दा प्रथा उन्मूलन का काफी सुंदर उदाहरण को प्रस्तुत किया गया है। उक्त कालीन इतिहास साक्ष्य है कि उस समय पर्दा–प्रथा का प्रचलन काफी था। उपन्यास की महिला पात्र छोटी रानी इस कुप्रथा का खण्डन करते हुए कहती है– ''परदे से काम नहीं चल सकता राव साहब, अटक पड़ने पर तो मुझे तलवार हाथ में लेकर रणक्षेत्र में जाना पड़ेगा।''[6]

प्राचीन कालीन समाज में चारों तरफ सती प्रथा का प्रचलन था। वैसे तो अनेक समाज सुधारकों ने इस कुप्रथा का घोर विरोध किया और अन्ततः उन्हें सफलता भी हासिल हुई। वर्मा जी ने भी इस कुप्रथा का विरोध अपने स्तर पर किया है। इनके औपन्यासिक स्त्री पात्र इस कुप्रथा का घोर विरोध करती हुई देखी जाती है। इनके स्त्री पात्रों में विषेशतः लक्ष्मीबाई, अवंतीबाई दुर्गावती आदि सती प्रथा का विरोध ही नहीं करती हैं, वरन् पति के मरने के बाद जीवित रहकर देश व समाज कल्याण का कार्य भी करती है। महारानी दुर्गावती के पति के मृत्यु के पश्चात उसका देवर चाहता है कि दुर्गावती सती के नियम का पालन करें, परन्तु वह दृढ़ निश्चय होकर इस कुप्रथा का विरोध करते हुए कहती है– ''मैं सती नहीं होऊँगी। वीर नारायण और राज्य का हित पहले है।''[7]

सच में वर्मा जी पुरूष होते हुए भी स्त्री जीवन के सम्पूर्ण पीड़ा को गहराई से एहसास किये थे। ऐसा लगता है जैसे उनका स्वयं का भोगा हुआ यथार्थ है। वे सदा नारी स्वतंत्रता के पक्षधर रहें। डॉ.रामविलास सिंह ने उनके विशय में उचित ही कहा है– ''नारी की स्वाधीनता और सम्मान को लेकर कथाएँ रचने की प्रवृत्ति उनमें पुरानी है। भारत के सामन्ती समाज में नारी उत्पीड़न को याद करके वह अब भी तिलमिला उठते हैं।''[8]

सामाजिक जीवन किसी भी प्रकार से राजनीतिक प्रभावों से अछूता नहीं रह सकता है। कोई भी सजग रचनाकार सामाजिक परिस्थितियों के साथ राजनीतिक परिदृश्य व समाज पर उसके प्रभावों को व्यक्त किए बिना नहीं रह सकता। राजनीति की महत्ता को स्वीकारते हुए अशोक वाजपेयी का कहना है– ''राजनीति को दरकिनार रखकर तत्कालीन सच्चाई का साक्षात्कार नहीं हो सकता।''[9] तो भला वर्मा जी जैसे जागरुक कथाकार राजनीतिक से कैसे दूर रह सकते थे। उन्होंने अपने उपन्यासों में राजनीति के आदर्श स्वरूप को उजागर किया, जिसके लिए इन्होनें राजाओं में कर्त्तव्यनिष्ठा की परिकल्पना को साकार करते हैं। इनके काल्पनिक राजा कर्त्तव्य को सर्वोपरि मानता है।

राजा का परम कर्त्तव्य होता है कि वह सदैव अहंकार से दूर रहे तथा सदा सत्य वचन बोले। इतिहास साक्ष्य है कि ललितादित्य एक महाबलशाली चक्रवर्ती राजा था। पर जीवन के अन्त में युद्ध के दौरान भीषण नरसंहार को देखकर वह दुःखी हो जाता है। अन्ततः वह सन्यास के पथ पर अग्रसित होता है, परन्तु संन्यास लेने से पूर्व वह भावी राजा को राजा के कर्त्तव्य से अवगत कराने के लिए पत्र लिखता है, जिसमें लिखा था– ''राजा मर जाए या सन्यास ले ले, तो उसके लिये कदापि शोक–पीड़ित नहीं होना चाहिए। राजा को अहंकारी नहीं होना चाहिए, अहंकार सब पापों की जड़ है। उसे पूरा आत्मसंयमी होना चाहिए। राजा कभी झूठा वचन और आश्वासन न दे, अपने वचन का पूरा पालन करे। राजा अपना समय प्रजा के हित में लगावे, प्रजाजन परस्पर खटपट न करें, फूट से देश का विन्यास होता है।''[10] अर्थात् उपन्यासकार ने ललितादित्य के पत्र के माध्यम से राजा के उत्कृष्ठ कत्तव्यों को उजागर किया है। वे भावी राजनीति के प्रमुख को इन आदर्शों को अपनाने तथा मार्ग दिखलाने का कार्य करते हैं। वे देश की जनता से भी एकता के साथ रहने की अपील करते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वृन्दावनलाल वर्मा एक आशावादी कथाकार है। वे ऐतिहासिक उपन्यास लिखते तो हैं, परन्तु वर्तमान समाज की समस्याओं का पूर्ण ध्यान रखते हैं। वे केवल समाज के विकृतियों को उजागर ही नहीं करते हैं, बल्कि उसका सुन्दर समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। अतः वे एक ऐसे आशावादी कथाकार हैं, जिन्होंने मानव प्रयत्नों द्वारा पूरे संसार को सुन्दर बनाने का बीड़ा उठाया। वे मानवता के सच्चे पुजारी थे। इनकी लेखनी की महत्ता को उजागर करते हुए वरिश्ठ आलोचक डॉ.रामविलास शर्मा ने ठीक ही कहा है– ''हिंदी कथा साहित्य के इतिहास में यह एक युगान्तर था। सामाजिक समस्याओं में बेहद दिलचस्पी लेने वाले एक देशभक्त

लेखक ने अपने इतिहास को नये प्रकाश में देखा था। एक नये मानवतावाद, धरती और उसके पुत्रों से एक नये स्नेह कथा–साहित्य में नये ओज, प्रकृति के नये कवि–सुलभ चित्रण का आरम्भ हुआ।''[11]

अध्ययन का उद्देश्य

वृन्दावनलाल वर्मा ने निर्द्वन्द्व भाव से ऊँच–नीच, जाँत–पाँत, छुआछूत की प्रवृत्तियों का विरोध कर समाज में पारस्परिक सौहार्द जैसे सद्भाव को स्थापित करने का समर्थन किया।इसी सद्भाव का तथ्य परक पड़ताल करना इस शोध आलेख का उद्देश्य है।

निष्कर्ष

अन्ततः कहा जा सकता है कि उनका समाज के प्रति इसी आशावादी दृष्टिकोण के कारण वे कल भी प्रासंगिक थे, आज भी प्रासंगिक है और कल भी रहेंगे। वर्मा जी ने केवल समाज जैसा है, वैसा ही नहीं दिखाया है। उन्होंने उसको इस रूप में प्रस्तुत किया है कि जिससे पाठक वर्ग युग के सच्चाई तथा समाज में हो रहे कार्यों के औचित्य एवं अनौचित्य का सही मीमांसा कर उन आदर्शों का अनुकरण करें, जिनसे एक उदात्त समाज का निर्माण सम्भव हो।

पाद टिप्पणी

1. *डॉ. प्रेमशंकर; रचना और राजनीति; पृ. 12; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1999*
2. *वर्मा वृन्दावनलाल; गढ़कुंडार, पृ. 20, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2016*
3. *वर्मा जी; टूटे काँटे, पृ. 188, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2016*
4. *वर्मा जी; लगन, पृ. 10, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2016*
5. *अचल मेरा कोई, पृ. 99, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2011*
6. *विराटा की पद्मिनी, पृ. 179, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2014*
7. *महारानी दुर्गावती; पृ. 219, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 1989*
8. *डॉ. षर्मा रामबिलास; आस्था और सौन्दर्य, पृ. 184, किताब महल प्रा.लि. इलाहाबाद, संस्करण : 1883*
9. *सं. ब्रजेन्द्र त्रिपाठी, समकालीन भारतीय साहित्य (द्विमासिक पत्रिका), पृ. 136, वर्श जनवरी–फरवरी*
10. *ललितादित्य; पृ. 223, प्रभात प्रकाषन, नई दिल्ली, संस्करण : 2010*
11. *डॉ. शर्मा रामबिलास; आस्था और सौन्दर्य, पृ. 186, किताब महल प्रा.लि. इलाहाबाद, संस्करण : 1883*